



प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

प्रथम अपील क्रमांक 179/2004

अपीलार्थी / आवेदक : मिथिलेश श्रीवास्तव

विरुद्ध

प्रत्यर्थी / अनावेदक : श्रीमती किरण श्रीवास्तव

निर्णय

निर्णय की उद्घोषणा हेतु दिनांक 29-9-2011 को सूचीबद्ध किया जाए।



सही/-

एन.के. अग्रवाल

न्यायाधीश



छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

प्रथम अपील क्रमांक 179/2004

अपीलार्थी / आवेदक : मिथिलेश श्रीवास्तव
विरुद्ध

प्रत्यर्थी / अनावेदक : श्रीमती किरण श्रीवास्तव

प्रथम व्यवहार अपील अंतर्गत धारा 28 हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 सहपठित धारा

96 व्यवहार प्रक्रिया संहिता, 1908

एकल पीठ : माननीय न्यायमूर्ति श्री एन.के. अग्रवाल

उपस्थिति:

- अपीलार्थी की ओर से: श्री अनिल खरे, अधिवक्ता एवं सुश्री नम्रता केशरवानी, अधिवक्ता।
- प्रत्यर्थी की ओर से: श्री प्रमोद कुमार वर्मा, वरिष्ठ अधिवक्ता सहित श्री राघवेन्द्र वर्मा, अधिवक्ता।

निर्णय

(दिनांक 29-09-2011 को उद्घोषित)

- (1) वैवाहिक विवाद से संबंधित यह अपील पति द्वारा प्रस्तुत की गई है, जो तृतीय अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, बिलासपुर द्वारा व्यवहार वाद क्रमांक 14-अ/2004 में पारित निर्णय



एवं आज्ञप्ति दिनांक 22.09.2004 के विरुद्ध निर्देशित है, जिसके माध्यम से अपीलार्थी/पति द्वारा हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 5 (i) (ख) सहपठित धारा 12, धारा 13 (1) (iii) एवं धारा 13 (i) के अंतर्गत विवाह-विच्छेद हेतु प्रस्तुत याचिका को सव्यय खारिज कर दिया गया है।

(2) मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं:-

(i) अपीलार्थी मिथिलेश श्रीवास्तव और प्रत्यर्थी श्रीमती किरण श्रीवास्तव का विवाह दिनांक 16.04.1998 को हिन्दू रीति-रिवाजों और परंपराओं के अनुसार संपन्न हुआ था। इस वैवाहिक संबंध से किसी संतान का जन्म नहीं हुआ। अपीलार्थी के अनुसार, यह विवाह दिनांक 11.01.2000 तक चला।

(ii) अपीलार्थी के अनुसार, विवाह के तत्काल पश्चात अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी के व्यवहार में कुछ असामान्यता देखी। उसने पूर्व में श्रीमती इंदु वर्मा को, जो विवाह में मध्यस्थ थीं, टेलीफोन पर सूचित किया और तत्पश्चात प्रत्यर्थी के माता-पिता को सूचित किया; इसके बाद वह ससुराल पक्ष के सदस्यों से प्रत्यर्थी के असामान्य व्यवहार और मानसिक रुग्णता के संबंध में मिल-बैठकर चर्चा करने का अनुरोध करता रहा, किंतु सब व्यर्थ रहा। अंततः, उसने रायपुर के एक प्रसिद्ध मनोरोग विशेषज्ञ डॉ. प्रकाश नारायण शुक्ला (अ.सा.-2) से परामर्श किया, जिन्होंने उपचार की सुविधा हेतु मरीज की चिकित्सा सम्बन्धी पूर्व पर्चों के साथ जाँच करने की सलाह दी। ससुराल पक्ष द्वारा न तो कोई बैठक की गई और न ही उपचार के पुराने पर्चे उपलब्ध कराए गए। अंततः, डॉ. प्रकाश नारायण शुक्ला (अ.सा.-2) ने प्रत्यर्थी का परीक्षण किया और उसे 'पैरानॉयड स्किज़ोफ्रेनिया' से ग्रस्त पाया। अपीलार्थी के अनुसार, प्रत्यर्थी विवाह के समय से ही उपरोक्त मानसिक विकार से



पीड़ित थी और इस तथ्य को उससे छुपाया गया था। चिकित्सक की सलाह के अनुसार, उक्त वैवाहिक संबंध से उत्पन्न होने वाली संतान भी मानसिक विकार से ग्रस्त हो सकती है, जो कि अपीलार्थी नहीं चाहता है।

(iii) जब इस तथ्य का खुलासा हुआ, तब ससुराल पक्ष के सदस्य प्रत्यर्थी को अपने साथ ले गए और उन्होंने उपचार के पर्चे सौंपने से इनकार कर दिया। तत्पश्चात, प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी के विरुद्ध दहेज प्रताड़ना का मामला दर्ज कराया, जिसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी को मानसिक पीड़ा और वित्तीय संकट का सामना करना पड़ा।

(iv) प्रतिवादी/प्रत्यर्थी ने अपने विरुद्ध लगाए गए सभी आरोपों का खंडन किया। उसने विशेष रूप से इस बात से इनकार किया कि वह 'पैरानॉयड स्किज़ोफ्रेनिया' या किसी भी प्रकार के मानसिक विकार से पीड़ित है। प्रत्यर्थी के अनुसार, उसने वनस्पति विज्ञान में एम.एस.सी. किया है और वह महर्षि विद्या मंदिर में शिक्षिका के रूप में कार्यरत थी। उसके अनुसार, अपीलार्थी की बहन ही समस्त विवादों की जड़ है। अपीलार्थी, उसकी माता और बहन ने उसे अपने मायके से और अधिक धन लाने के लिए उकसाया। अपीलार्थी के साथ विवाह के बावजूद, उसे कई वर्ष अपने मायके में बिताने पड़े। दहेज की मांग के कारण ही उसके द्वारा शिकायत दर्ज कराई गई थी।

(v) उसने (प्रत्यर्थी ने) कभी कोई दवा नहीं ली और न ही वह किसी चिकित्सक के पास उपचाराधीन थी। दुर्भावनापूर्ण उद्देश्य से, अपीलार्थी ने डॉ. प्रकाश नारायण शुक्ला से एक प्रमाणपत्र प्राप्त कर लिया था, जिन्होंने न तो कभी उसका परीक्षण किया था और न ही वह उनके पास उपचाराधीन थी। उपरोक्त कहानी किसी भी तरह से (उचित या अनुचित



तरीके से) विवाह-विच्छेद की आज्ञाप्ति प्राप्त करने के लिए गढ़ी गई थी, और याचिका सारहीन होने के कारण खारिज किए जाने योग्य है।

(3) विचारण न्यायालय द्वारा निम्नलिखित वाद-प्रश्न विरचित किए गए:

वाद विषय

[1]- क्या, अनावेदिका किरण विवाह पूर्व मानसिक रोग से ग्रस्त थी, जिस तथ्य छिपाकर घोखा देकर आवेदक का विवाह उससे कराया?

[2]- क्या. अनावेदिका किरण आवेदक के साथ क्रूरतापूर्वक व्यवहार करती हैं?

[3]- क्या, अनावेदिका किरण इस हद तक तथा, इस प्रकृति के मानसिक रोग एवं मानसिक विकृति से पीड़ित है, जिसके फलस्वरूप आवेदक का उसके साथ रहना संभव नहीं हैं ?

[4]- क्या? आवेदक मिथिलेश अपनी पत्नि अनावेदिका के साथ क्रूरतापूर्वक व्यवहार करता हैं, जिसके कारण उसे पति से अलग रहना पड़ रहा हैं?

[5]- सहायता एवं व्यय?

4. अपीलार्थी ने स्वयं का तथा डॉ. प्रकाश नारायण शुक्ला (आ.सा.-2) का परीक्षण कराया। प्रत्यर्थी ने, हालांकि, केवल अपना कथन दर्ज कराया, किंतु उसका प्रतिपरीक्षण पूरा नहीं हो सका क्योंकि वह अपने अभिसाक्ष्य को पूर्ण करने हेतु कटघरे में उपस्थित नहीं हुई।
5. विचारण न्यायालय ने, आक्षेपित निर्णय एवं आज्ञाप्ति के माध्यम से, अपीलार्थी/पति द्वारा प्रस्तुत विवाह-विच्छेद की याचिका को अन्य बातों के साथ-साथ इस आधार पर खारिज



कर दिया कि; अपीलार्थी यह सिद्ध करने में विफल रहा कि प्रत्यर्थी विवाह से पूर्व या उसके पश्चात 'पैरानॉयड स्किज़ोफ्रेनिया' से पीड़ित थी, और वह यह सिद्ध करने में भी विफल रहा कि प्रत्यर्थी द्वारा उसके प्रति मानसिक क्रूरता की गई थी।

6. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अनिल खरे एवं सुश्री नम्रता केशरवानी ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि: डॉ. प्रकाश नारायण शुक्ला (आ.सा.-2) का साक्ष्य स्पष्ट रूप से यह दर्शाता है कि प्रत्यर्थी 'पैरानॉयड स्किज़ोफ्रेनिया' से ग्रसित थी; प्रत्यर्थी ने अपना प्रतिपरीक्षण पूर्ण होने से पूर्व, अपना साक्ष्य पूरा करने हेतु कटघरे में जानबूझकर उपस्थित नहीं हुई और प्रत्यर्थी द्वारा कोई साक्ष्य प्रस्तुत न किए जाने की स्थिति में, अपीलार्थी के साक्ष्य पर भरोसा किया जाना चाहिए था; प्रत्यर्थी की अक्षमता के कारण अपीलार्थी को शारीरिक संबंधों के वैवाहिक सुख से वंचित रखा गया, जो स्वयं एक विवाहित पुरुष के प्रति क्रूरता की श्रेणी में आता है; अपीलार्थी के विरुद्ध दहेज प्रताड़ना का झूठा मामला दर्ज कराना अपने आप में क्रूरता है; तथा अपीलार्थी और प्रत्यर्थी पर्याप्त समय से अलग रह रहे हैं, विवाह का अपूरणीय रूप से विघटन हो चुका है, उनके साथ रहने की कोई संभावना नहीं है, इसलिए अपीलार्थी 'विवाह के अपूरणीय विघटन' के आधार पर विवाह-विच्छेद की आज्ञा प्राप्त करने का हकदार है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित न्याय दृष्टांत प्रस्तुत किया :

1. नवीन कोहली बनाम नीलू कोहली, (2006) 4 एस.सी.सी. 558
2. ए. जयचंद्र बनाम अनिल कौर, (2005) 2 एस.सी.सी. 22
3. विनीता सक्सेना बनाम पंकज पंडित, (2006) 3 एस.सी.सी. 778



4. देव दास डारसेना बनाम श्रीमती गिरिजा डारसेना, 2010 (2)

सी.जी.एल.जे. 142

7. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री प्रमोद वर्मा ने विवाह-विच्छेद के आधारों और विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्षों का संदर्भ देते हुए यह तर्क दिया कि, अपीलार्थी यह सिद्ध करने में पूर्णतः विफल रहा है कि प्रत्यर्थी किसी ऐसे मानसिक विकार से या इस सीमा तक पीड़ित है जिससे वह विवाह और संतानोत्पत्ति के लिए अयोग्य हो गई हो, या उसे विक्षिप्तता के बार-बार दौरे पड़े हों।

8. आगे यह तर्क दिया गया कि अधिनियम की धारा 13(1)(iii) के तहत विवाह-विच्छेद का आधार बनाने के लिए केवल इतना स्थापित करना पर्याप्त नहीं है कि प्रत्यर्थी निरंतर या रुक-रुक कर मानसिक विकार से पीड़ित है, बल्कि यह भी स्थापित किया जाना आवश्यक है कि वह विकार किस प्रकार का है और किस सीमा तक है कि अपीलार्थी से प्रत्यर्थी के साथ रहने की उचित रूप से अपेक्षा नहीं की जा सकती। दूसरे शब्दों में, केवल यह स्थापित करने से कि प्रत्यर्थी मानसिक विकार यानी 'स्किज़ोफ्रेनिया' से पीड़ित है, प्रमाण का भार पूरा नहीं हो जाता, बल्कि अपीलार्थी को यह सिद्ध करने के लिए और साक्ष्य प्रस्तुत करने होंगे कि मानसिक विकार इस प्रकार का और इस सीमा तक है कि अपीलार्थी से प्रत्यर्थी के साथ रहने की तर्कसंगत रूप से अपेक्षा नहीं की जा सकती।

9. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री प्रमोद वर्मा के अनुसार, ऐसा कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है जिससे यह सिद्ध हो सके कि प्रत्यर्थी 'पैरानॉयड स्किज़ोफ्रेनिया' से पीड़ित है और उसके लिए दवाएं ले रही है, या किसी भी समय उपरोक्त मानसिक विकार के लिए उपचाराधीन रही थी। प्रत्यर्थी के साथ आधे घंटे की अनौपचारिक मुलाकात के बाद डॉ. प्रकाश



नारायण शुक्ला द्वारा जारी किए गए प्रमाण पत्र पर विचारण न्यायालय द्वारा अविश्वास किया जाना पूर्णतः उचित है।

10. प्रत्यर्थी द्वारा दाण्डिक कार्यवाही संस्थित किए जाने मात्र से क्रूरता कारित होना नहीं माना जाएगा। उक्त दाण्डिक प्रकरण अभी भी विचाराधीन है।
11. प्रत्यर्थी की ओर से किसी भी साक्ष्य के अभाव में भी, अपने मामले को सिद्ध करने का भारी उत्तरदायित्व अपीलार्थी पर है, जिसमें वह पूर्णतः विफल रहा है। विचारण न्यायालय ने मामले के तथ्यों और सामग्रियों का उचित एवं सम्यक मूल्यांकन करने के पश्चात याचिका को खारिज किया है, अतः यह अपील खारिज किए जाने योग्य है।

12. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना तथा आक्षेपित निर्णय एवं आज्ञाप्ति सहित विचारण न्यायालय के अभिलेखों का परिशीलन किया है।
13. इस मामले के न्यायनिर्णयन हेतु अधिनियम की धारा 5, 12(1)(ख)(ग), 13(iक) और 13(1)(iii) के सांविधिक प्रावधान निम्नानुसार रूपरेखाबद्ध हैं:

5. हिन्दू विवाह के लिए शर्तें - दो हिन्दूओं के बीच विवाह अनुष्ठापित किया जा सकेगा

यदि निम्नलिखित शर्तें पूरी हो जाएं अर्थात:-

(i) विवाह के समय दोनों पक्षकारों में से, न तो वर की कोई जीवित पत्नी हो और

न ही वधू का कोई जीवित पति हो,

(ii) विवाह के समय दोनों पक्षकारों में से कोई पक्षकार-



(क) चित्त-विकृति के परिणामस्वरूप विधिमान्य सम्पत्ति देने में असमर्थ न हो, या

(ख) विधिमान्य सम्पत्ति देने में समर्थ होने पर भी इस प्रकार के या इस हद तक मानसिक विकार से पीड़ित न रहा हो कि वह विवाह और सन्तानोत्पत्ति के लिए अयोग्य हो, या

(ग) उसे उन्मत्तता (xxx) का बार-बार दौरा न पड़ता हो,

(iii) विवाह के समय वर ने इक्कीस वर्ष की आयु और वधू ने अठारह वर्ष की आयु पूरी कर ली हो,

(iv) जब तक कि दोनों पक्षकारों में से हर एक को शासित करने वाली रूढ़ि या प्रथा से उन दोनों के बीच विवाह अनुज्ञात न हो, वे प्रतिषिद्ध नातेदारी की डिग्रियों के भीतर न हो,

(v) जब तक कि दोनों पक्षकारों में से हर एक को शासित करने वाली रूढ़ि या प्रथा से उन दोनों के बीच विवाह अनुज्ञात न हो, वे एक दूसरे के सपिण्ड न हो ;"

12. **शून्यकरीण विवाह** (1) कोई भी विवाह, वह इस अधिनियम के प्रारम्भ के चाहे पूर्व

अनुष्ठापित हुआ हो चाहे पश्चात, निम्नलिखित आधारों में से किसी पर भी शून्यकरणीय होगा और अकृतता की डिक्री द्वारा बातिल किया जा सकेगा:-



- (ख) कि विवाह धारा 5 के खण्ड (ii) में विनिर्दिष्ट शर्तों का उल्लंघन करता है, या
- (ग) कि अर्जीदार की सम्पत्ति या, जहां कि धारा 5 जिस रूप में बाल-विवाह अवरोध (संशोधन) अधिनियम, 1978 के प्रारम्भ के ठीक पूर्व विद्यमान थी स रूप में उसके अधीन अर्जीदार के विवाहार्थ संरक्षक की सम्मति अपेक्षित हो वहां ऐसे संरक्षक की सम्मति, बल प्रयोग द्वारा या कर्म काण्ड की तात्त्विक तथ्य या परिस्थिति के बारे में कपट द्वारा अभिप्राप्त की गई थी, या
-

"13. विवाह-विच्छेद (1) कोई भी विवाह, वह इस अधिनियम के प्रारम्भ के चाहे पूर्व अनुष्ठापित हुआ हो चाहे पश्चात पति अथवा पत्नी द्वारा उपस्थापित अर्जी पर विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा इस आधार पर विघटित किया जा सकेगा कि-

(i) दूसरे पक्षकार ने विवाह के अनुष्ठापन के पश्चात अपने अर्जीदार के साथ क्रूरता का व्यवहार किया है, या

(iii) दूसरा पक्षकार अन्य असाध्य रूप से विकृत-चित्त रहा है अथवा निरन्तर या आंतरायिक रूप से इस प्रकार के और इस हद तक मानसिक विकार से पीड़ित रहा है कि अर्जीदार से युक्तियुक्त रूप से यह आशा नहीं की जा सकती है कि वह प्रत्यर्थी के साथ रहे।

स्पष्टीकरण --- इस खण्ड में,--



(क) "मानसिक विकार" पद से मानसिक बीमारी, मस्तिष्क का संरोध या अपूर्ण विकास, मनोवृत्ति या मस्तिष्क का कोई अन्य विकार या निःशक्तता अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत विखंडित मनस्कता भी है,

(ख) "मनोविकृति" पद से मस्तिक का दीर्घस्थायी विकार या निःशक्तता (चाहे इसमें बुद्धि की अवसामान्यता हो या नहीं) अभिप्रेत है जिसके परिणामस्वरूप दूसरे पक्षकार का आचरण असामान्य रूप से आक्रमक या गंभीर रूप से अनुत्तरदायी हो जाता है और चाहे उसके लिए चिकित्सीय उपचार अपेक्षित हो या नहीं अथवा ऐसा उपचार किया जा सकता हो या नहीं, या"

14. अधिनियम की धारा 5 का खंड (ii) (ख) किसी वैध हिंदू विवाह के लिए शर्तों में से एक का प्रावधान करता है कि किसी भी पक्षकार को चित्तविकृति, मानसिक विकार या उन्माद से ग्रस्त नहीं होना चाहिए। अधिनियम की धारा 12 (1) (ख) के निबंधनों के अनुसार, एक विवाह को अकृत किया जा सकता है, यदि दूसरा पक्ष विवाह के समय मानसिक विकार या उन्माद से पीड़ित था। अधिनियम की धारा 13 (1) (iii) यह प्रावधान करती है कि विवाह का कोई भी पक्षकार अन्य बातों के साथ-साथ इस आधार पर विवाह-विच्छेद की आज्ञाप्ति हेतु याचिका प्रस्तुत कर सकता है कि दूसरा पक्ष असाध्य रूप से चित्तविकृत रहा है, या निरंतर या रुक-रुक कर ऐसे मानसिक विकार से पीड़ित रहा है कि याचिकाकर्ता से प्रत्यर्थी के साथ रहने की तर्कसंगत रूप से अपेक्षा नहीं की जा सकती। यह पूरी तरह निर्विवाद है कि अधिनियम के पूर्वोक्त प्रावधानों के उल्लंघन में किया गया विवाह स्वतः शून्य नहीं होता, बल्कि वह केवल शून्यकरणीय होता है।



15. निर्विवाद रूप से, एक स्वस्थ मस्तिष्क ही सुखी वैवाहिक जीवन की कुंजी है। अतः, वैवाहिक जीवन को सुखमय बनाने के लिए विवाह के पक्षकार का मस्तिष्क सामान्य और स्वस्थ होना चाहिए। विचारों, व्यवहार और मस्तिष्क का ऐसा विकार जो चित्तविकृति की ओर ले जाता है, अधिनियम की धारा 13 (1) (iii) के तहत आवेदन दायर करने हेतु वाद-कारण उत्पन्न कर सकता है। मानसिक विकार की अपेक्षित श्रेणी के अस्तित्व को सिद्ध करने का भार उस जीवनसाथी पर होता है जो तथ्यों की उस स्थिति के आधार पर दावा प्रस्तुत कर रहा है।
16. अधिनियम की धारा 13 (1) (iii) के निबंधनों के अनुसार विवाह-विच्छेद की आज्ञाप्ति केवल उसी स्थिति में प्रदान की जा सकती है जब चित्तविकृति को असाध्य माना जाए। कोई पक्षकार विचित्र या अजीब व्यवहार कर सकता है। कार्य के स्तर में अनुपयुक्त, प्रगतिशील और निरंतर गिरावट इस निष्कर्ष की ओर ले जा सकती है कि वह व्यक्ति वर्षों से धीरे-धीरे बढ़ने वाली किसी बीमारी से ग्रस्त है। तथापि, वह बीमारी ऐसी प्रकृति की होनी चाहिए कि दूसरे जीवनसाथी से उसके साथ रहने की तर्कसंगत रूप से अपेक्षा न की जा सके।
17. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **शारदा बनाम धर्मपाल, (2003) 4 एस. सी. सी. 493** के मामले में अभिनिर्धारित किया गया है, जीवनसाथी के व्यवहार में चिड़चिड़ेपन और कुछ हद तक अनियमित व्यवहार के कुछ प्रबल उदाहरण मात्र इस बात के प्रमाण नहीं हो सकते कि वह व्यक्ति निरंतर या रुक-रुक कर किसी मानसिक विकार से ग्रस्त है।
18. उच्चतम न्यायालय ने **राम नारायण गुप्ता बनाम श्रीमती रामेश्वरी गुप्ता, (1988) 4 एस. सी. सी. 247** के मामले में, इसी प्रकार के मानसिक विकार, अर्थात् 'स्किज़ोफ्रेनिया'



से संबंधित विषय पर विचार करते हुए, कंडिका 24, 25, 26, 27, 28 और 29 में निम्नानुसार अवधारित किया है:-

"24. किंतु वे बीमारियाँ जिन्हें 'मानसिक' कहा जाता है, उन्हें उन बीमारियों से मौलिक रूप से भिन्न रखा जाता है जो 'शरीर' को कष्ट देती हैं। 'फिलोसोफी एंड मेडिसिन' (Philosophy and Medicine), खंड-5, पृष्ठ-X में, विद्वान संपादक उन तथ्यों का उल्लेख करते हैं जो गुणात्मक रूप से दोनों के बीच अंतर करते हैं:

"निस्संदेह, मानसिक रुग्णता को इतना कमतर इसलिए आंका जाता है क्योंकि यह व्यक्ति के 'व्यक्तित्व' पर प्रहार करती है। यह हमारे अस्तित्व की जड़ों पर अनियंत्रित भय, जुनून, बाध्यता और चिंताओं के साथ वार करती है..."

"...यह आंशिक रूप से उस भाषा में भी परिलक्षित होता है जिसका उपयोग हम मानसिक रूप से बीमार व्यक्तियों का वर्णन करने के लिए करते हैं। व्यक्ति (स्वयं) एक उन्मत्त(hysteric) है, एक न्यूरोटिक है, एक ऑब्सेसिव (जुनूनी) है, एक स्किज़ोफ्रेनिक है, एक उन्माद अवसाद(मैनिक-डिप्रेसिव) है। दूसरी ओर, किसी व्यक्ति को हृदय रोग है, कैंसर है, फ्लू है, मलेरिया है, चेचक है...."

(बल दिया गया)



"25. यह सत्य है कि 'स्किज़ोफ्रेनिया' को एक अत्यंत कठिन मानसिक संताप कहा जाता है। ऐसा माना जाता है कि इसकी शुरुआत अत्यंत कपटपूर्ण होती है और इसमें आनुवंशिक पूर्व-प्रवृत्ति एक कारक होती है। इसकी मुख्य विशेषता भावनाओं का उथलापन है और इसे वास्तविकता से अलगाव द्वारा पहचाना जाता है। व्यामोह (पैरानॉयड) की स्थितियों में, पीड़ित व्यक्ति दूसरों द्वारा व्यक्त की गई तिरस्कार की हल्की सी अभिव्यक्ति पर भी, उत्पीड़न के मतिभ्रम से उत्पन्न अनुपातहीन प्रतिक्रियाएं देता है। यहाँ तक कि सहानुभूति की अभिव्यक्ति और दया के नेक नियत कार्यों को भी पीड़ित व्यक्ति कपटपूर्ण जाल समझने लगता है। अपनी सबसे भयावह अभिव्यक्ति में, यह बीमारी व्यक्ति को वास्तविकता से पूरी तरह काट देती है और उच्च मानसिक कार्यों में गिरावट लाती है।"

26. "स्किज़ोफ्रेनिया" का वर्णन इस प्रकार किया गया है:

"यह एक गंभीर मानसिक विकार (या विकारों का समूह) है, जिसकी विशेषता सोचने की प्रक्रिया, वास्तविकता से संपर्क और भावनात्मक प्रतिक्रियाशीलता का विघटन है। भ्रम और मतिभ्रम - विशेष रूप से आवाजें सुनाई देना) इसके सामान्य लक्षण हैं, और रोगी आमतौर पर यह महसूस करता है कि उसके विचार, संवेदनाएं और कार्य दूसरों द्वारा नियंत्रित हैं या दूसरों के साथ साझा किए जा रहे हैं। वह सामाजिक रूप से कट जाता है और ऊर्जा तथा पहल करने की शक्ति खो देता है। स्किज़ोफ्रेनिया के मुख्य प्रकार साधारण होते हैं, जिसमें बढ़ता हुआ सामाजिक अलगाव और व्यक्तिगत प्रभावहीनता प्रमुख परिवर्तन हैं; 'हेबेफ्रेनिक', जो किशोरावस्था या युवा



वयस्कता में शुरू होता है (देखें हेबेफ्रेनिया); 'पैरानॉयड', जिसमें प्रमुख व्यामोह और भ्रम होते हैं; और 'कैटेटोनिक', जिसमें स्पष्ट शारीरिक/गतिक गड़बड़ी होती है (देखें कैटेटोनिया)।

स्किज़ोफ्रेनिया सामान्यतः—परंतु अनिवार्य रूप से नहीं—एक प्रगतिशील क्रम में चलता है। हाल के वर्षों में 'फेनोथियाजाइन्स' जैसी दवाओं और सशक्त मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक प्रबंधन तथा पुनर्वास के माध्यम से इसके रोग-निदान में सुधार हुआ है। इसकी उत्पत्ति में प्रबल आनुवंशिक कारक होते हैं, और पर्यावरणीय तनाव इस बीमारी को तीव्र कर सकते हैं।"

(देखें: कंसाइज मेडिकल डिक्शनरी, पृष्ठ 566: ऑक्सफोर्ड मेडिकल पब्लिकेशन्स, 1980)

27. "किंतु ध्यान देने और बल देने योग्य बिंदु यह है कि इस बीमारी की विशेषता जो **व्यक्तित्व-विघटन** है, वह **विभिन्न श्रेणियों/स्तरों** का हो सकता है। सभी स्किज़ोफ्रेनिक रोगियों में इस बीमारी की तीव्रता एक समान नहीं होती। एफ.सी. रेडलिच और डैनियल एक्स. फ्रीडमैन ने अपनी पुस्तक "*द थ्योरी एंड प्रैक्टिस ऑफ साइकियाट्री*" (1966 संस्करण) में कहा है:

'स्किज़ोफ्रेनिया की कुछ प्रतिक्रियाएँ, जिन्हें हम "साइकोसिस" कहते हैं, अपेक्षाकृत हल्की और क्षणिक हो सकती हैं; अन्य प्रतिक्रियाएँ रोज़मर्रा के जीवन के कई पहलुओं में बहुत गंभीर हस्तक्षेप नहीं करतीं...' (पृष्ठ 252) 'क्या विशिष्ट लक्षण संबंधी सुधार और पुनरावृत्ति अंतर्जात प्रक्रियाओं की अभिव्यक्तियाँ हैं, या वे मनोसामाजिक चरों के प्रति प्रतिक्रियाएँ हैं, या



दोनों? कुछ रोगी स्पष्ट रूप से पूरी तरह ठीक हो जाते हैं; जब ऐसा सुधार बिना उपचार के होता है, तो हम इसे "स्वतः सुधार" कहते हैं। इस शब्द का अर्थ कोई स्वतंत्र अंतर्जात प्रक्रिया नहीं है; यह उतनी ही संभावना है कि स्वतः सुधार विशिष्ट चिकित्सीय गतिविधि के अलावा अन्य अनैच्छिक लेकिन अनुकूल मनोसामाजिक उद्दीपनों के प्रति एक प्रतिक्रिया है।" (बल दिया गया)

28. उच्च न्यायालय का तर्क यह है कि मानसिक विकार की वह अपेक्षित श्रेणी, जो अकेले विवाह-विच्छेद को न्यायोचित ठहरा सकती है, स्थापित नहीं की गई है। श्री गोयल के इसके विपरीत दिए गए प्रबल तर्कों के बावजूद, हमें यह स्थिति का एक तर्कहीन मूल्यांकन प्रतीत नहीं होता है।

29. उच्च न्यायालय ने कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा **श्रीमती रीता रॉय बनाम सितेश चंद्र, ए.आई.आर. 1982 (कलकत्ता) 138** के मामले में दिए गए निर्णय का संदर्भ दिया और उस पर अवलंब लिया। उस मामले में कलकत्ता उच्च न्यायालय की युगलपीठ ने यह अवधारित किया था:

"...स्किज़ोफ्रेनिया के प्रत्येक मामले पर उसके स्वयं के गुणों के आधार पर विचार किया जाना चाहिए"

"... पूर्वोक्त खंड (iii) के अनुसार, आज्ञाप्ति प्राप्त करने के लिए दो तत्व आवश्यक हैं। पहला, संबंधित पक्षकार को चित्तविकृत होना चाहिए या वह रुक-रुक कर स्किज़ोफ्रेनिया या मानसिक विकार से पीड़ित होना चाहिए। साथ ही, वह बीमारी ऐसी प्रकृति की और इस सीमा तक होनी चाहिए कि





दूसरे पक्षकार से उसके साथ रहने की तर्कसंगत रूप से अपेक्षा न की जा सके। अतः, उस खंड का केवल एक तत्व आज्ञाप्ति प्रदान करने के लिए अपर्याप्त है।"

19. उच्चतम न्यायालय ने **ए. जयचन्द्र बनाम अनील कौर** (पूर्वोक्त) के मामले में, "क्रूरता"

पद की व्याख्या करते हुए कंडिका 10 से 12 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

"10. अधिनियम में "क्रूरता" शब्द को परिभाषित नहीं किया गया है। क्रूरता

शारीरिक या मानसिक हो सकती है। क्रूरता, जो विवाह-विच्छेद का एक

आधार है, को ऐसे स्वेच्छाचारी और औचित्यहीन आचरण के रूप में

परिभाषित किया जा सकता है जो जीवन, शरीर के अंगों या स्वास्थ्य

(शारीरिक या मानसिक) के लिए खतरा पैदा करने वाला हो, या जिससे ऐसे

खतरे की तर्कसंगत आशंका युक्तियुक्त उत्पन्न होती हो। मानसिक क्रूरता के

प्रश्न पर उस विशिष्ट समाज के वैवाहिक संबंधों के मानदंडों, उनके सामाजिक

मूल्यों, स्तर और उस वातावरण के आलोक में विचार किया जाना चाहिए

जिसमें पक्षकार रहते हैं। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, क्रूरता में

मानसिक क्रूरता भी शामिल है, जो वैवाहिक दोष के दायरे में आती है। क्रूरता

का शारीरिक होना अनिवार्य नहीं है। "यदि जीवनसाथी के आचरण से यह

स्थापित हो जाता है और/या यह वैध निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि

जीवनसाथी का व्यवहार ऐसा है जिससे दूसरे जीवनसाथी के मन में अपने

मानसिक कल्याण के प्रति आशंका उत्पन्न होती है, तो यह आचरण 'क्रूरता'

की श्रेणी में आता है। विवाह जैसे नाजुक मानवीय संबंध में, मामले की





'संभावनाओं' को देखना होता है। 'संदेह के घेरे से परे प्रमाण' की अवधारणा आपराधिक मुकदमों में लागू की जाती है, न कि दीवानी मामलों में, और निश्चित रूप से पति-पत्नी जैसे नाजुक व्यक्तिगत संबंधों के मामलों में तो बिल्कुल नहीं। इसलिए, किसी मामले में यह देखना होता है कि संभावनाएँ क्या हैं, और 'विधिक क्रूरता' का निर्धारण केवल तथ्य के रूप में नहीं, बल्कि दूसरे पक्ष के कृत्यों या चूक के कारण शिकायतकर्ता जीवनसाथी के मन पर पड़ने वाले प्रभाव के रूप में किया जाना चाहिए। क्रूरता शारीरिक या दैहिक हो सकती है या मानसिक हो सकती है। शारीरिक क्रूरता में मूर्त और प्रत्यक्ष साक्ष्य हो सकते हैं, लेकिन मानसिक क्रूरता के मामले में हर समय प्रत्यक्ष साक्ष्य उपलब्ध नहीं हो सकते। जिन मामलों में प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं होते, वहाँ न्यायालयों को उन घटनाओं की मानसिक प्रक्रिया और मानसिक प्रभाव की जांच करना आवश्यक होता है जो साक्ष्य में सामने आती हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में वैवाहिक विवादों में साक्ष्यों पर विचार किया जाना चाहिए।"

11. अभिव्यक्ति "क्रूरता" का उपयोग मानवीय आचरण या मानवीय व्यवहार के संबंध में किया गया है। यह वैवाहिक कर्तव्यों और दायित्वों के संबंध में या उनके प्रति किया गया आचरण है। क्रूरता किसी एक पक्ष का वह व्यवहार या आचरण है, जो दूसरे पक्ष को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर रहा हो। क्रूरता मानसिक या शारीरिक, जानबूझकर की गई या अनजाने में हुई हो सकती है। यदि यह शारीरिक है, तो न्यायालय को इसका निर्धारण करने में कोई समस्या नहीं होगी; यह तथ्य और उसकी मात्रा का प्रश्न है। यदि यह मानसिक है, तो समस्या कठिनाइयाँ प्रस्तुत करती है। सबसे पहले, जांच क्रूर व्यवहार की



प्रकृति से शुरू होनी चाहिए; दूसरा, दूसरे जीवनसाथी के मन पर ऐसे व्यवहार का प्रभाव क्या पड़ा, क्या इससे यह तर्कसंगत आशंका उत्पन्न हुई कि दूसरे के साथ रहना हानिकारक या क्षतिकारक होगा। अंततः, यह आचरण की प्रकृति और शिकायतकर्ता जीवनसाथी पर इसके प्रभाव को ध्यान में रखते हुए निकाला जाने वाला एक निष्कर्ष है। हालांकि, ऐसा मामला भी हो सकता है जहाँ शिकायत किया गया आचरण स्वयं में ही इतना बुरा हो और स्वतः विधिविरुद्ध या अवैध हो। तब दूसरे जीवनसाथी पर पड़ने वाले प्रभाव या क्षतिकारक असर की जांच करने या उस पर विचार करने की आवश्यकता नहीं रह जाती। ऐसे मामलों में, यदि वह आचरण स्वयं सिद्ध हो जाता है या स्वीकार कर लिया जाता है, तो क्रूरता स्थापित मानी जाएगी। (देखें: **शोभा**

रानी बनाम मधुकर रेड्डी, (1988) 1 एस. सी. सी. 105)।

12. क्रूरता गठित करने के लिए, जिस आचरण की शिकायत की गई है वह "गंभीर और महत्वपूर्ण" होना चाहिए, ताकि इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सके कि याचिकाकर्ता जीवनसाथी से दूसरे जीवनसाथी के साथ रहने की तर्कसंगत रूप से अपेक्षा नहीं की जा सकती। यह "वैवाहिक जीवन की सामान्य नोक-झोंक" से अधिक गंभीर होना चाहिए। परिस्थितियों और पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए आचरण की जांच की जानी चाहिए ताकि इस निष्कर्ष तक पहुँचा जा सके कि क्या शिकायत किया गया आचरण वैवाहिक विधि के तहत क्रूरता की श्रेणी में आता है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, आचरण पर कई कारकों की पृष्ठभूमि में विचार किया जाना चाहिए, जैसे कि पक्षकारों का सामाजिक स्तर, उनकी शिक्षा, शारीरिक और मानसिक स्थिति, रीति-रिवाज



और परंपराएं। ऐसी कोई सटीक परिभाषा तय करना या उन परिस्थितियों का संपूर्ण विवरण देना कठिन है, जो क्रूरता गठित करती हों। "यह (आचरण) इस प्रकार का होना चाहिए कि न्यायालय के विवेक को यह संतोष हो जाए कि दूसरे जीवनसाथी के व्यवहार के कारण पक्षकारों के बीच संबंध इस सीमा तक बिगड़ चुके हैं कि उनके लिए मानसिक पीड़ा, प्रताड़ना या संकट के बिना एक साथ रहना असंभव होगा, जिससे शिकायतकर्ता जीवनसाथी विवाह-विच्छेद प्राप्त करने का हकदार हो जाए। क्रूरता गठित करने के लिए शारीरिक हिंसा नितांत आवश्यक नहीं है, और अपार मानसिक पीड़ा तथा प्रताड़ना पहुँचाने वाला निरंतर आचरण भी अधिनियम की धारा 10 के अर्थ के भीतर क्रूरता माना जा सकता है। मानसिक क्रूरता में अभद्र और अपमानजनक भाषा का उपयोग करके मौखिक दुर्व्यवहार और अपमान शामिल हो सकता है, जिससे दूसरे पक्ष की मानसिक शांति में निरंतर खलल पड़ता हो।"

20. उच्चतम न्यायालय ने **विनीता सक्सेना बनाम पंकज पंडित (पूर्वोक्त)** के मामले की कंडिका 29 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

"29. हमारी दृष्टि में, विचारण न्यायालय अपीलार्थी के उन अखंडनीय साक्ष्यों का सही मूल्यांकन करने में विफल रहा, जिसने हर मोर्चे पर अपना मामला सिद्ध किया था। गवाह के रूप में पेश हुए डॉक्टरों, जिन्होंने प्रत्यर्थी का मूल चिकित्सीय अभिलेख प्रस्तुत किया था, उनके द्वारा यह निर्विवाद रूप से स्थापित किया गया है कि प्रत्यर्थी मानसिक विकार से ग्रस्त है। इसके अतिरिक्त, मानसिक उन्माद/मानसिक विकार के आधार पर विवाह-विच्छेद की मांग करने का आधार 'क्रूरता' के आधार से भिन्न है। हमारी राय में, अपीलार्थी ने यह



निर्विवाद रूप से सिद्ध कर दिया था कि प्रत्यर्थी मानसिक विकार से पीड़ित था और अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी द्वारा और उसके इशारे पर क्रूरता झेली थी।"

21. वर्तमान मामले के तथ्यों पर आते हुए, विद्वान विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थी (पत्नी) के स्किज़ोफ्रेनिया से ग्रस्त होने के अभिवचन को खारिज करते हुए निष्कर्ष दिया:

- i) अप्रैल 1998 के महीने में, अर्थात् विवाह के तुरंत बाद, अपीलार्थी (पति) प्रत्यर्थी के साथ 10-12 दिनों के लिए यात्रा पर था। इस बीच, उन्होंने वैष्णो देवी और अन्य धार्मिक स्थलों के साथ-साथ चंडीगढ़ और दिल्ली का भ्रमण किया और होटलों में ठहरे, जहाँ उन्हें किसी मनोरोग विशेषज्ञ की कोई आवश्यकता नहीं पड़ी। पुनः, अप्रैल 1999 के महीने में उन्होंने तिरुपति, रामेश्वरम, कन्याकुमारी, कांचीपुरम जैसे धार्मिक स्थलों की यात्रा की और उस समय भी वे होटलों में ठहरे थे, और किसी मनोरोग विशेषज्ञ से परामर्श करने की कोई आवश्यकता महसूस नहीं की गई।
- ii) वे लगभग दो वर्ष की अवधि तक साथ रहे। इस बीच अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को कभी कोई दवा लेते नहीं देखा। जैसा कि उसने अपने बयान के कंडिका 106 में स्वीकार किया है, यह केवल उसका एक संदेह था।
- iii) केवल आधे घंटे की अनौपचारिक (मित्रवत) बातचीत के आधार पर, और उसे (पत्नी को) सूचित किए बिना उसका मनोरोग विशेषज्ञ से परीक्षण करवाना— ऐसी स्थिति में डॉ. प्रकाश नारायण शुक्ला द्वारा दिए गए प्रमाण पत्र पर विश्वास नहीं किया जा सकता; विशेषकर तब, जब यह दिनांक 10.01.2000 को जारी किया गया था, अर्थात् विवाह-विच्छेद की याचिका दायर करने से





ठीक 20 दिन पहले। डॉ. शुक्ला ने अपने बयान में स्वीकार किया है कि प्रतिकूल वातावरण और तनावपूर्ण स्थिति में भी उपरोक्त बीमारी के लक्षण दिखाई दे सकते हैं।

22. मैंने अपीलार्थी (पति) के साथ-साथ डॉ. प्रकाश नारायण शुक्ला (अ.स.2) के बयानों का बारीकी से अवलोकन किया है। ऐसा कोई भी साक्ष्य उपलब्ध नहीं है जो यह संकेत दे कि प्रत्यर्थी (पत्नी) कथित मानसिक विकार के संबंध में किसी डॉक्टर के अधीन उपचाराधीन थी या कोई दवा ले रही थी। अपीलार्थी उसके साथ लगभग दो वर्ष की अवधि तक रहा। यदि वह 'तीव्र मानसिक विकार' (एक्यूट स्किज़ोफ्रेनिया) से ग्रस्त होती, तो अपीलार्थी चिकित्सीय सहायता के बिना उसके साथ इतनी लंबी अवधि तक नहीं रह सकता था। वास्तव में, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, प्रत्यर्थी के विरुद्ध यह आरोप लगाना कि वह 'पैरानॉयड स्किज़ोफ्रेनिया' से पीड़ित थी/है, स्वयं अपीलार्थी की ओर से क्रूरता की श्रेणी में आता है।

23. मामले के उपरोक्त व्यापक पहलुओं के संदर्भ में और ऊपर उल्लिखित उच्चतम न्यायालय के सिद्धांतों के आलोक में, मेरी राय में, अपीलार्थी धारा 12 के साथ पठित धारा 5(i)(ख) के तहत अपने और प्रत्यर्थी के बीच हुए विवाह को शून्य घोषित करने के लिए, तथा अधिनियम की धारा 13(1)(iii) के तहत विवाह-विच्छेद की आज्ञाप्ति प्राप्त करने के लिए कोई भी आधार सिद्ध करने में विफल रहा है। विद्वान विचारण न्यायालय ने तदनुसार बिल्कुल सही निर्णय लिया है।

24. जहाँ तक क्रूरता के आधार का प्रश्न है, प्रत्यर्थी (पत्नी) की शिकायत पर अपीलार्थी (पति) के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क के तहत एक दांडिक मामला दर्ज किया गया है, जो अभी भी विचाराधीन है। पक्षकारों द्वारा विधिक उपचार का सहारा लेने को



तब तक क्रूरता नहीं कहा जा सकता, जब तक कि वह दुर्भावनापूर्ण तरीके से और विरोधी पक्ष को परेशान करने या प्रताड़ित करने के उद्देश्य से शुरू न किया गया हो। अपीलार्थी और उसके गवाहों ने ऐसा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है जिससे यह पता चले कि प्रत्यर्थी ने उसे परेशान करने और प्रताड़ित करने की मंशा से जानबूझकर या दुर्भावनापूर्वक अभियोजन शुरू किया है। इसके विपरीत, 'पैरानॉयड स्किज़ोफ्रेनिया' से पीड़ित होने का गलत आरोप लगाना स्वयं अपीलार्थी की ओर से क्रूरता की श्रेणी में आता है। मैं इस प्रकार के अभियोजन को क्रूरता के रूप में स्वीकार करने में असमर्थ हूँ। अतः, अपीलार्थी अधिनियम की धारा 13(1)(i-क) के तहत विवाह-विच्छेद की आज्ञाप्ति प्राप्त करने का मामला सिद्ध करने में भी विफल रहा है।

25. बॉम्बे उच्च न्यायालय की एक युगलपीठ ने **श्रीमती दीपलक्ष्मी सचिन झिंगाडे बनाम**

सचिन रमेशराव झिंगाडे, ए.आई.आर. 2010 बॉम्बे 16 के मामले में यह अभिनिर्धारित किया है: "पत्नी द्वारा घरेलू हिंसा अधिनियम के तहत शिकायत दर्ज करना अपने आप में पत्नी की ओर से क्रूरता का कृत्य नहीं माना जाएगा, जब तक कि सकारात्मक साक्ष्यों से यह न पाया जाए कि वह शिकायत झूठी थी। जब अधिनियम पत्नी को घरेलू हिंसा अधिनियम के प्रावधानों के तहत न्यायालय जाने की अनुमति देता है और यदि उस उपचार का लाभ उठाया जाता है, तो ऐसे कृत्य को क्रूरता का कृत्य नहीं माना जाना चाहिए; अन्यथा किसी भी मामले में एक महिला कोई शिकायत दर्ज नहीं कर पाएगी, यदि शिकायत दर्ज करने को ही क्रूरता का कृत्य मान लिया जाए।"

26. अपीलार्थी (पति) के विद्वान अधिवक्ता ने उच्चतम न्यायालय के **नवीन कोहली बनाम**

नीलू कोहली (पूर्वोक्त) के मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब लिया है, जिसमें उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जब पक्षकार पर्याप्त समय



से अलग रह रहे हों और उनमें से कोई एक विवाह-विच्छेद की आज्ञाप्ति के लिए याचिका दायर करता है, तो यह उपधारित किया जा सकता है कि विवाह का अपूरणीय विघटन हो चुका है।

27. यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि विधायिका ने धारा 13 के तहत विवाह-विच्छेद के आधारों में से एक के रूप में "विवाह के अपूरणीय विघटन" को शामिल नहीं किया है। उच्चतम न्यायालय ने **नवीन कोहली बनाम नीलू कोहली (पूर्वोक्त)** के मामले में अभिनिर्धारित किया है: हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 के तहत विवाह का अपूरणीय विघटन होना विवाह-विच्छेद का आधार नहीं है। केवल अत्यंत विषम परिस्थितियों में ही न्यायालय विवाह-विच्छेद के लिए विवाह के अपूरणीय विघटन के इस आधार का उपयोग कर सकता है। विवाह, पति और पत्नी के बीच वैवाहिक संबंधों की एकता का परिणाम होता है। वैसे भी, **भारत के संविधान के अनुच्छेद 142** के तहत उच्चतम न्यायालय की शक्तियाँ भिन्न हैं और इसलिए, अनुच्छेद 142 के तहत उच्चतम न्यायालय के निर्णय को उच्च न्यायालयों के समक्ष कार्यवाही में सीधे तौर पर लागू नहीं किया जा सकता, क्योंकि इस न्यायालय को एक अपील में यह पता लगाना आवश्यक होता है कि क्या विवाह-विच्छेद की आज्ञाप्ति पारित करने के लिए कोई सांविधिक आधार उपलब्ध है या नहीं।
28. इसके अतिरिक्त, किसी भी पक्षकार को अपने स्वयं के दोष का लाभ उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती।
29. मामले के उपरोक्त पहलुओं पर विचार करते हुए, मेरी राय में, विचारण न्यायालय ने विवाह-विच्छेद की याचिका को खारिज करने में कोई त्रुटि नहीं की है।





30. पूर्वगामी कारणों से, मुझे अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत इस अपील में कोई सार नजर नहीं आता। अपील, सारहीन होने के कारण खारिज किए जाने योग्य है और एतद्वारा खारिज की जाती है।
31. व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जा रहा है।
32. तदनुसार, आज्ञाप्ति तैयार की जाए।

सही/-

एन.के. अग्रवाल

न्यायाधीश

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Translated by : Ashwani Shukla, Advocate